काविश

एकांतर मासिक साहित्यिकी

अंक–10 नवम्बर– 2020

गांधी (साउथ अफ़्रीका में) एक 'ऐक्टिविस्ट' या चतुर बनिया...! (5)

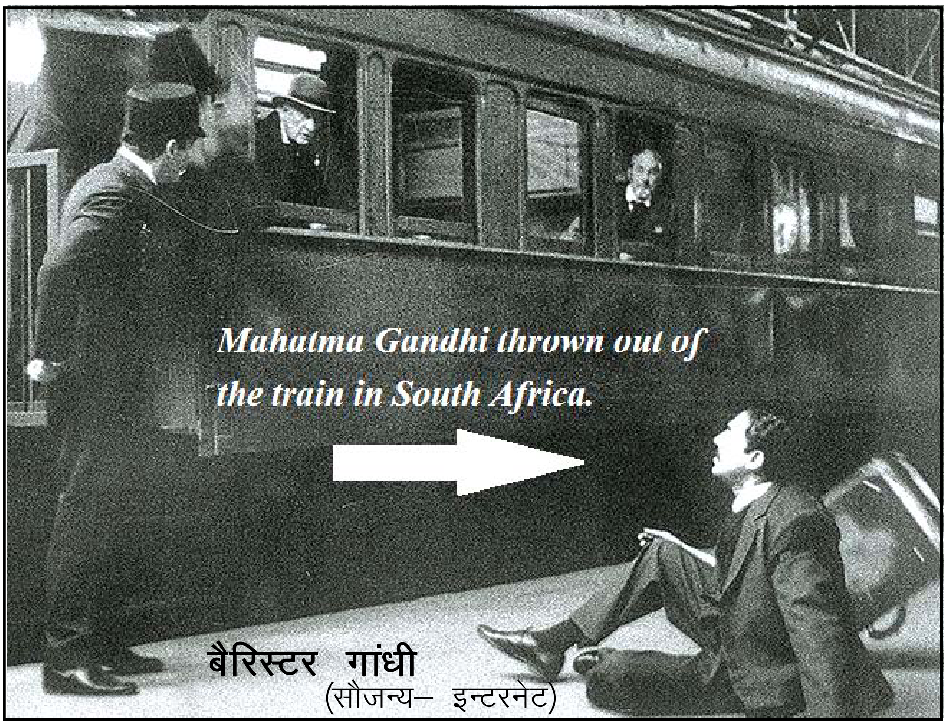

बैरिस्टर गांधी
(सौजन्य– इन्टरनेट)

साउथ अफ़्रीका में गोरों द्वारा रंगभेदी एवं सामंती मानसिकता के मद में गांधी को ट्रेन के प्रथम श्रेणी के डिब्बे से नीचे फैंकने वाली घटना एवं वहाँ हिंदुस्तानियों पर हो रहे अमानवीय अत्याचारों के विरुद्ध जब जहाँ जो संभव हुआ तब गांधी नाम के कुली' द्वारा प्रतिरोध करने की घटनाओं को दुनिया भर के अख़बारों द्वारा प्रमुखता से प्रकाशित किये जाने के फलस्वरूप गांधी दुनिया के लिए चर्चा के विषय तो बन गये', परन्तु स्थानीय एवं ब्रिटिश शासकों की निगाह में एक– अराजक तत्त्व... नज़र आये !' उनकी हरकतों को हिंदुस्तान में भी सही क़दम नहीं माना गया– कुछ ने इसे अपरिपक्व बचकाना हरक़त कह कर कुंठात्मक ग़ुस्से का इज़हार किया तो किसी ने कहा–नया–नया मुर्गा हैं... डंडे, लाते खाकर लाइन पर आ जायेगा या फिर जेल की हवा 'खायेगा। हाँ, कुछ लोग ज़रूर सहानुभूति प्रकट कर रहे थे, क्योंकि वे जानते थे कि जब यहाँ अपने देश में, अपनों के बीच रह कर मुठ्ठी भर अंग्रेज़ शासकों के नुमाइंदों के आगे गर्दन सीधी करके खड़े नहीं हो सकते, तब उन्हीं कुख्यात निरंकुश सामंतों की मांद में रह कर ऐसी हिमाकत करना सामान्य व्यक्ति के वश की बात नहीं है...!' तब की बात तो छोड़ो आज अपने देश में, अपनी गली मोहल्ले में पता नहीं कब कौन' दबंग गालियाँ देते हुए लतिया दे, हफ़्ता वसूली करे और हम चुप–चाप नपुंसक की तरह

खिसियाते आस–पास यह देख कर कि कोई पहचान का प्रत्यक्षदर्शी तो नहीं है, भगवान का शुक्रिया अदा करते हैं। जान बची तो लाखों पाये।

गांधी इसलिए सुर्खी में आये क्योंकि उस समय तक हिंदुस्तान में अंग्रेज़ों के विरुद्ध हज़ारों क्रांतिकारियों द्वारा ईंट का जवाब पत्थर से देने वाला मार्ग अपनाया हुआ था, परन्तु 'उनकी अधिकांश गति–विधियाँ गुप्त या गुरिल्ला विधि की होती थीं, जबकि गांधी अंग्रेज़ों के बनाये नियम क़ायदों के अंदर अपने हक़ की लड़ाई आमने– सामने लड़ने का प्रयास कर रहे थे ! वैसे सिविल नाफरमानी दुनिया के लिए कोई नया मार्ग नहीं था लेकिन 'ऐसे प्रयास शुद्ध राजनैतिक होने के कारण सामंती निरंकुशता से कुचल दिये जाते रहे...। दबंग के सामने स्वाभिमान से सिर उठा कर खड़ा होना उससे बड़ा अपराध माना जाता है, इसलिए गांधी का यह अहिंसात्मक 'आग्रह' रूपी विरोध वहाँ की सरकारों के लिए गले में हड्डी फंसने जैसा बन गया...!

गुलामी एवं रंगभेद के संताप ने गांधी का पीछा प्रीटोरिया में भी नहीं छोड़ा। 'जब वे वहाँ ट्रेन से उतरने के बाद होटल की तलाश में आस–पास जानकारी लेने की कोशिश करने लगे तब लोगों ने उन्हें देख कर भी–अनदेखा कर दिया...। इससे अंदाज़ा लगाया जा सकता है कि अपने आपको विकसित, सभ्य एवं ईसा मसीह के शिष्य कहने वाले गोरों का अतरंग कितना काला, वीभत्स अमानवीय हुआ करता था...! वहाँ प्लेटफ़ार्म या फुटपाथ पर रह कर भी रात नहीं गुज़ारी जा सकती थी, क्योंकि ऐसा करना ग़ैरक़ानूनी था ! 'सत्यमार्गी के साथ भगवान होते हैं !'

गांधी की मनोदशा समझ कर एक अमेरिकन नीग्रो उनके पास आया और समस्या जान कर उन्हें एक फैमिली होटल में ले गया। उस नीग्रो के भरोसे पर होटल के प्रबंधक ने गांधी को रात भर रुकने के लिए जगह इस शर्त पर दे दी कि– 'जहाँ तक संभव हो वे अपना खाना आदि कमरे में ही लें !' परन्तु जब होटल में ठहरे लोगों को पता चला कि जिस 'कुली' की अख़बारों में चर्चा है, वह यहाँ ठहरा है तो उन्होंने गांधी के भोजनकक्ष में आकर भोजन करने पर कोई एतराज नहीं जताया...। बल्कि जैसे ही गांधी भोजन कक्ष में आये तो कई लोग जिज्ञासावश उनके आस–पास 'जाकर उनके बारे में जानने की कोशिश करने लगे...! भोजनकक्ष में आने पर गांधी को उनके मुताबिक भोजन तो मिलने से रहा... लेकिन उन्हें यह जानने का मौक़ा ज़रूर मिला कि रंगभेद एवं गुलामी का चक्र कितना और कहाँ तक व्याप्त है, जिसे वे कितना और कैसे तोड़ सकते हैं। 'और यह भी कि अच्छे लोग हर जगह होते हैं...!

यहाँ एक ईसाई कहानी याद आ जाती है– एक बार ईसा मसीह के एक भक्त को 'दुर्गम रेगिस्तान पार करना था, वह मुश्किलें झेलता हुआ, ईसा को याद करता हुआ जैसे–तैसे अपनी मंजिल पर पहुँच गया। वहाँ पहुँच कर उसने अपने गुरु से शिकायत भरे लहज़े में पूछा कि– आप कहते हैं कि 'प्रभु' अपने भक्तों के साथ हमेशा रहते हैं...! परन्तु मैं रास्ते भर उन्हें याद करता रहा, लेकिन वे मेरी मदद को नहीं आये...?' गुरु आध्यात्मिक मुस्कुराहट के साथ बोले– "क्या तुम यह सोचते हो कि यह मुश्किल रास्ता तुम पार करके आये हो ? देखो– वे रेत पर जो पैर के निशान हैं, क्या वे तुम्हारे हैं...? प्रभु ही तुम्हें गोद में उठा कर लाये हैं।" उन ईश्वरीय पदचिह्नों को देख कर वह ईसामय हो गया...!

दूसरे दिन गांधी– सेठ अब्दुल्ला के वकील मि. बेकर ए. डब्ल्यू. से मिलने पहुँच गये, जो आला नम्बर का वकील होने के अलावा पक्का धर्मावलंबी ईसाई भी था। लेकिन जब वह गांधी से मिला तो उनका क़ायल होए बिना नहीं रह सका और सहानुभूति प्रदर्शित करते हुए बोला– "मि. गांधी ! यहाँ आपको कुछ नहीं करना बस, इतना करते रहियेगा कि दोनों पार्टियों के पत्राचार एवं दस्तावेज़ों को पढ़–समझ कर उनका सार अंग्रेजी में मुझ तक पहुँचाते रहियेगा। बाक़ी– 'मैं हूँ ना !'

फिर हमदर्दी दिखाते हुए बोला– "हाँ, आप ठहरे कहाँ हैं ? मैं रविवार होने के कारण आपको लेने के लिए किसी को भेज नहीं सका...! आपको कोई परेशानी तो नहीं हुई ?" प्रश्न यह उठता है कि– "क्या उसे पता नहीं होगा कि वहाँ हिंदुस्तानियों की दशा– क्या है, और गांधी पर क्या गुज़री होगी ? जो अब इस प्रकार अनजान बनने का प्रपंच कर रहा था ! क्या सेठ अब्दुल्ला ने बिना अपने वकील (मि. बेकर) को गांधी के बारे में बताये उन्हें बैरिस्टर की हैसियत से यहाँ भेज दिया होगा...?' मि. बेकर भले ही धर्मावलंबी हो, परन्तु था तो गोरा ईसाई ही ना...! 'हो सकता है कि वह गांधी को सम्मान पूर्वक 'रिसीव' करके या कराके महत्व नहीं देना चाहता हो ! या फिर उसमें भी व्यावसायिक ईर्ष्यावश अहं जाग गया हो कि देखें– ऐसा कौन–सा तीरंदाज 'कुली बैरिस्टर' है, जो यहाँ टिक सके...! परन्तु गांधी ने उसके शिष्टाचार को सहजता से लेते हुए उसका धन्यवाद करते हुए रात का सब विवरण कह सुनाया।

मि. बेकर गांधी की सहजता देख कर अपराध बोध में डूब गया और उसकी भरपाई करते हुए बोला– "यहाँ आपको रहने के लिए जगह मिलना बहुत मुश्किल है। मैं आपको एक महिला के पास ले चलता हूँ, शायद वे मेरी सिफ़ारिश पर आपको जगह दे दें...!" वे दोनों वहाँ गये और मि. बेकर के कहने पर उस महिला ने गांधी को अपने यहाँ रुकने के लिए जगह दे दी। एक दो मुलाकात के बाद जब मि. बेकर ने गांधी का ईसाई धर्म के बारे में ज्ञान एवं उसके प्रति सम्मान देखा तो वह सोचने लगा कि इसे ईसाई बनाया जा सकता है ! इस लालच में उसने गांधी को उसके द्वारा दानस्वरूप बनाये एक चर्च में रहने तक का प्रस्ताव दे दिया ! परन्तु गांधी ने धन्यवाद कह कर अपना मंतव्य स्पष्ट कर दिया। जबकि वहाँ गिरमिटिया की तरह गये अधिकांश हिंदुस्तानी छोटे–मोटे प्रलोभनों में ही इस जाल में फंस कर धर्म परिवर्तन करते रहे थे...! गांधी का ईसाई धर्म के प्रति ही ऐसा श्रद्धाभाव नहीं था बल्कि हर मज़हब के प्रति था। क्योंकि वे मानते थे कि बिना दूसरे को पूरा जाने, किसी भी सत्य तक नहीं पहुँचा जा सकता। श्री रामकृष्ण परमहंस तो इस सत्य को जानने के लिए महिनों मुसलमान की तरह मस्जिद में रहे और ईसाई की तरह चर्च मे। मात्र इसी एक सूत्र को अपना कर स्वामी विवेकानन्द उस समय अमेरीका में सनातन धर्म की पताका फहरा रहे थे। कुछ लोग गांधी के इस गुण को आज मात्र बनियाई चालाकी कह कर अपनी कुंठा निकालते हैं...!' हाँ, यह बनियाई है, जिसमें बनने और बनाने का काम किया जाता है, न कि तोड़ने–मिटाने का...!' जिसे भगवान महावीर ने अनेकांतवाद कहा है, प. दिनदयाल उपाध्याय ने एकात्मवाद... और सनातन धर्म में सर्वधर्म समभाव यानी वसुधैवकुटुम्बकम् के नाम से मौजूद है ! धर्म–दुधारी तलवार की तरह उभयकारी होता है ! इस मायावी खेल में... कब किसके मन को क्या अच्छा लग जाये, क्या बुरा... पता नहीं ! जब एक समय इस मायावी मज़हबी 'खेल' में ईसाई मिशनरीज धर्मप्रचारक 'होली फ़ादर' के रूप में एक विशेष 'मुखौटा' लगा कर दुनिया के कमज़ोर, वंचित, उपेक्षित निष्कपट आदिवासियों के बीच उनके ख़ैरख्वाह बन कर उन्हें अपने सम्मोहनपाश में बांध कर एक विशेष मानसिकता का 'धार्मिक गुलाम' बना रही थीं, तब हम धर्म के नाम पर वैष्णव, शैव, शाक्त, गणेश, सूर्य 'आदि संप्रदायों एवं मनुवादी वर्ण व्यवस्था में ऊँच–नीच में बंट कर आपस में ही लड़–मर रहे थे ! हाँ, अपने यहाँ भी कुछ स्वयंभू मठाधीश धर्म के नाम पर उसी प्रकार का जाल बिछाकर अपने ही भोले–भाले लोगों को गुमराह करके स्वयं का उल्लू सीधा करते रहे हैं...! इसीलिए जहाँ तथाकथित सामूहिक धर्म है, वहाँ वह राजनीति का मोहरा बन कर संघर्ष एवं युद्ध का कारण बनता रहा है... और

जब–जब जिस–जिस महापुरुष ने 'उससे अलग' सच्चाई का रास्ता बताने की कोशिश की है, उसे इन मायावी धर्मावलंबी धंधेबाज़ों की प्रताड़ना का शिकार होना पड़ा है– चाहे वे ईसा मसीह हों, सुकरात हों, मंसूर हों, बुद्ध हों, महावीर हों, विवेकानंद हों या आज गांधी...! जबकि हमारे उपनिषद् एवं धर्मशास्त्र शुरू से 'स्वधर्म' की बात करते (आत्मा की बात) रहे हैं। वेदांत–सूत्र के मुताबिक– 'अथातो ब्रह्मजिज्ञासा' मनुष्य को परम तत्त्व की जिज्ञासा करनी चाहिए, जिसकी अद्वैतवाद के रूप में ईसामसीह, पैगंबर मोहम्मद, महावीर एवं बुद्ध, लाओत्से और कनफ्यूशियस ने भी वकालत की है ! जिसे अष्टावक्र ने विस्तार से समझाया है। गीतामाता 'के अनुसार– संशयात्मा के लिए न तो इस लोक में, न ही परलोक में कोई सुख है'– 'नायं लोकोऽस्ति न परो न सुखं संशयात्मनः।'

मि.बेकर ने गांधी की सहजता का लाभ उठा कर उन्हें चर्च में होने वाली धर्मचर्चाओं में भाग लेने के लिए तैयार कर लिया। वहाँ गांधी का कई लोगों से परिचय कराया, जिनमें– मि. कोट्स एवं दो प्रौढ़ कुमारी महिलाएँ– मिस हैरिस एवं मिस गेब मुख्य थे...! काफ़ी समय तक वहाँ लोग गांधी को कुँवारा ही 'समझते रहे। वहाँ 'अतिखुले तथाकथित आधुनिक सामाजिक वातावरण में कुँवारे लड़के–लड़कियाँ मानसिक एवं शारीरिक संबंधों के दृष्टिकोण से दोनों तरफ़ से असुरक्षित दुर्बल मानसिकता के होते हैं ! गांधी भी हो सकते थे और लंदन में कई बार ऐसी असहज स्थित में पहुँच भी गये थे, परन्तु दृढ़ आत्मसंयम के फलस्वरूप वे हर समय काज़ल की कोठरी में से निखालिस निकलते रहे...!'....बहुशाखा ह्यनन्ताश्च बुद्धयोऽव्यवसायिनाम्।। 'जो दृढ़ प्रतिज्ञ नहीं हैं उनकी बुद्धि अनेक शाखाओं में विभक्त रहती है।' (गीता)

ईसाइयों में अनेक संप्रदाय होते हैं। मि. कोट्स 'क्वेकर' संप्रदाय के थे, जिसमें सहज एवं सादगीपूर्ण सात्विक बनियाई ज़िंदगी जीने की शिक्षा दी जाती है। ऐसे लोगों को अपने यहाँ सूफ़ी सज्जन कहा जाता है...! छोटी–सी मुलाक़ात के बाद गांधी उन कुवाँरियों के घर प्रत्येक रविवार को होने वाली धर्मचर्चा में भाग लेने जाने लगे। उस मंडली ने गांधी को धार्मिक पुस्तकों से लाद दिया...। यही नहीं, धर्मचर्चा के दौरान उन्हें यह बताना पड़ता था कि उन्होंने क्या पढ़ा और उस पर उनकी क्या प्रतिक्रिया है ? इस बहाने गांधी को दुनियाभर के विद्वान लेखकों एवं दार्शनिकों को जानने एवं समझने का मौक़ा मिला। इसके साथ ही वे अपने एवं अन्य मज़हबों के धर्मशास्त्रों का अध्ययन भी उतनी ही गंभीरता से करते रहे, ताकि जान सकें कि कौन–सा रास्ता ज़्यादा सही है ! अंत में वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि सभी धर्म एक ही मुक़ाम पर पहुँचते हैं, बस मार्ग अलग–अलग हैं ! गांधी 'स्वधर्म' पर डटे रहे। यही सच्चा ज्ञानमार्ग है ! कर्मयोग को सही रूप में क्रियान्वित करने के लिए 'सभी मज़हबों का 'ज्ञान' होना आवश्यक है। गीतामाता में कहा है– 'कर्मणो ह्यपि बोद्धव्यं बोद्धव्यं च विकर्मणः। अकर्मणश्च बोद्धव्यं गहना कर्मणो गतिः।। 'कर्म की बारीकियों को समक्षना अत्यन्त कठिन है। अतः वह ठीक से जाने कि कर्म क्या है, विकर्म क्या है, और अकर्म क्या है ?'

जब मि. कोट्स का गांधी पर चिकने घड़े की तरह पानी नहीं चढ़ा तो वह मन ही मन खीज़ गया...! उसने गांधी के गले में पड़ी तुलसी की माला को माध्यम बना कर उन्हें परोक्षरूप से अंधविश्वासी एवं परम्परावादी हिंदू बताने की कोशिश की...! लेकिन गांधी ने अडिग बने रह कर... उस कंठी से अपनी माँ की भावनाओं का संबंध बता कर, उस बात को आया–गया कर दिया।

उस अदालती केस का प्रतिवादी सेठ तैयब हाजी खान मुहम्मद भी सेठ अब्दुल्ला की तरह प्रिटोरिया का नामी–गिरामी कारोबारी था। इतने प्रभावशाली व्यक्ति के विरुद्ध बिना मि. बेकर के सहयोग के 'कुली गांधी' के लिए कुछ कर पाना असंभव–सा था। लेकिन अपनी सूझबूझ एवं आध्यात्मिक शक्ति के कारण उन्होंने जिस प्रकार मि. बेकर एवं मि. कोट्स की मंडली से संबंध बना लिया था उसके कारण अब वे ईसाई समाज में मात्र 'कुली बैरिस्टर' न रह कर एक 'धार्मिक अभ्यार्थी' की तरह जाने जाने लगे थे। जिसे ईश्वरीय चमत्कार कह सकते हैं और दार्शनिक श्री जे. कृष्णमूर्ति के अनुसार– 'सजगता' कहा जा सकता है...! मतलब, यदि हम दूसरे की सामाजिक, व्यक्तिगत, धार्मिक, व्यावसायिक, राजनीतिक भावनाओं के प्रति 'सजग' हैं, यानी किसी भी प्रकार उसकी संवेदनाओं को ठेस नहीं पहुँचाते हुए अपना स्वधर्म निबाहते हैं, तो हम सत्य मार्ग के अनुगामी हो सकते हैं !'

धीरे–धीरे गांधी ने अपने होने का औचित्य ठहराते हुए मि. बेकर एवं उस केस से संबंधित अन्य लोगों तथा सेठ अब्दुल्ला के बीच अपनी स्थिति एक ब्रिज (पुल) की तरह अपरिहार्य बना ली। सेठ अब्दुल्ला यह महसूस करने लगा कि गांधी पर खर्च किया जा रहा पैसा सफेद हाथी पालना नहीं है, बल्कि बनियाई भाषा में सही जगह 'इनवेस्ट' करना है...!' वैसे भी बनियाई धंधा बिना जुआ खेले नहीं होता और जो जितना बड़ा व्यापारी होता है, उसे उतना ही बड़ा जुआरी मानना चाहिए...! जब गांधी वहाँ गये थे तब सेठ अब्दुल्ला की तरफ़ से सख़्त हिदायत थी कि गांधी को विरोधी पार्टी से किसी भी प्रकार संपर्क नहीं करना है, परन्तु अब जब गांधी को पक्का विश्वास हो गया कि यह केस क़ानूनी कार्रवाई से नहीं निपट सकता और दोनों पक्षों के बीच मात्र कौरव–पाण्डवों की तरह अहं का झगड़ा है; यदि इसे समझौता करके नहीं निपटाया गया तो महाभारत की तरह बर्बादी के अलावा कुछ नहीं मिलेगा; गांधी उसी जुगाड़ में लग गये। इस प्रकार उस समय जब दुनिया के नृशंस विध्वंसकारी युद्धखोर तानाशाह राष्ट्राध्यक्ष धर्म एवं संस्कृति को राजनीति का हथियार बना कर आत्मघाती भयाभय युद्धों को आमंत्रित कर रहे थे एवं विभिन्न प्रकार से प्रकृति एवं मानव जाति पर कहर बरसा रहे थे, तब गांधी प्रेम–सत्य–अहिंसा के राग की कृष्णमयी बाँसुरी बजा कर अनजान 'देश में भी कुछ नया करने का प्रयास कर रहे थे...! अपनी इसी ताक़त पर गांधी सेठ अब्दुल्ला की पूर्व सहमति

के बिना सेठ तैयब हाजी के यहाँ एक हिंदुस्तानी के नाते शिष्टाचारी मुलाक़ात करने के लिए पहुँच गये। सेठ तैयब भी मूल रूप से पोरबंदर का ही रहने वाला होने के कारण उनसे नगरबंधु की तरह आत्मीयता से मिला। जबकि अब तक उसे गांधी के बारे में यह सब कुछ पता चल चुका था कि वे किस काम से यहाँ आये हैं। यही नहीं, उसने गांधी परिवार के रुतबे एवं अहसानों का ज़िक्र करते हुए उनके परिवार एवं पोरबंदर में रहने वाले अन्य मिलने–जुलने वालों की ख़ैर–ख्वाह पूछी। यहाँ तक कि उनसे अपने यहाँ रहने का आग्रह किया। इस मुलाक़ात के दौरान उनके बीच उस केस का ज़िक्र तक न होकर, दो हमवतन बनियों के बीच हिंदुस्तानियों की दशा–दुर्दशा पर वैचारिक 'लेन–देन' ही होता रहा। गांधी ने इस मुलाक़ात से 'एक पंथ कई काम कर लिये। उस केस में समझौता कराने का पहला कदम 'रखने के साथ' वहाँ गुलामीभरी नारकीय ज़िंदगी' जी रहे हिंदुस्तानियों के बीच आज़ादी एवं स्वाभिमान की दबी हुई चिंगारी को ऑक्सीजन देने का काम भी कर लिया।

अपने मालिक के विरोधी से इस प्रकार मिलने का काम गांधी जैसा व्यक्ति ही कर सकता है, वरना आज कोई अधीनस्थ या साथी मालिक के विपक्षी से मात्र हलो–हाय भी कर ले तो वो गया काम से...! धोखेबाज़, नमक हराम, गद्दार, बिकाऊ, विभीषण न जाने किन–किन उपाधियों से नवाजा जाकर बाहर कर दिया जाये...! लेकिन गांधी ने तत्काल इस मुलाक़ात के बारे में सब कुछ सेठ अब्दुल्ला को बता दिया। पहले तो वह कुछ क्षण के लिए विचलित हुआ, परन्तु गांधी की ईमानदारी एवं स्पष्टवादिता के तेज़ के सामने उसके अविश्वास का अंधेरा टिक नहीं सका। बिना चमत्कार के कोई किसी को नमस्कार नहीं करता ! बनिया तो घास भी नहीं डालता...! परन्तु यह कोई ईश्वरीय करिश्मा ही था कि यहाँ अच्छे–अच्छे बनिया एक बिना दमड़ीवाले बनिया के सामने धाराशाही हो रहे थे...!

धर्मचर्चा के दौरान गांधी की जान–पहचान एक कट्टरपंथी ईसाई समुदाय– 'प्लीमथ ब्रदर्न' परिवार से भी हो गयी। बल्कि धीरे–धीरे समस्त ईसाई प्रबुद्ध वर्ग उनके प्रभामंडल में आने लगा...! 'प्लीमथ' ब्रिटेन का एक ऐतिहासिक बंदरगाह है, जहाँ से एक समय 'होली फ़ादर्स' के समूह धर्म प्रचार के नाम पर पलायन करके उपनिवेशी कॉलोनियों में जाकर बस गये थे और वहाँ रह कर वे मूल आदिवासियों का उत्थान करने के नाम पर उनका धर्मपरिवर्तन कराते रहे...! इस मंडली के सत्संग से गांधी को यह सीखने को मिला कि यदि आपको अपने वतन या धर्म के लिए कुछ करना है तो 'लोगों को सामुहिक रूप से एकत्रित करके ही संभव है। गांधी को क़रीब एक वर्ष यहाँ ठहरना था। बस, वे इसी सूत्र को ध्यान में रख कर अपने काम में लग गये। वे जिस 'पेइंग गेस्ट हाउस' में ठहरे हुए थे उसकी मालकिन बहुत भली एवं धार्मिक महिला थीं, जिसके कारण उन्हें यहाँ खाने एवं पीने की कोई परेशानी नहीं थी। बनिया खाली बैठने से रहा ! किसी बनिये के यहाँ तो कतई नहीं, क्योंकि बनियायी धंधे में इसे मनहूस माना जाता है।

प्रिटोरिया– जोहनिसवर्ग से 36 मील दूर ट्रांसवाल' की राजधानी होने के कारण साफ़–सुथरा शांत प्राकृतिक ख़ूबसूरती से हरा–भरा सुंदर शहर था। यहाँ ज़्यादातर अधिकारी एवं संपन्न लोग रहते थे। इनमें ब्रिटिश अंग्रेज़, बोअर्स (डच) स्थानीय एवं अमेरिकन हबशियों के साथ एशियन मुसलमान एवं अन्य गिरमिटियों के बीच बहुत कम हिंदू थे। यहाँ का मुख्य धंधा खेती ही था, जिसमें मकई बहुतायत में पैदा होती थी, जो हबशियों का मुख्य अन्न था। गेहूँ भी होता था। फल एवं सब्जियों की तो भरमार थी। हिंदुस्तानियों ने वहाँ आम'के वृक्ष भी खूब लगा दिये थे। लेकिन जब गांधी वहाँ के गाय बैल एवं अन्य पालतू पशुओं को हट्टा–कट्टा स्वस्थ देखते थे तो अपने यहाँ के भूखे–सूखे लावारिस–सी ज़िंदगी गुज़ार रहे गोवंश का ख़याल आते ही कुंठा में डूब जाते थे। वहाँ लोगों के पास खेती की ज़मीन सैकड़ों बीघा में हुआ करती थी एवं उसी अनुपात में पशुधन। क़रीब चार सौ वर्ष पहले डच यहाँ आये और उन्होंने यहाँ के मूल निवासी हबशियों को डरा एवं प्रताड़ित करके अपना गुलाम–सा बना लिया। जबकि ये हबशी मोटे, तगड़े ऊँचे कद के बहादुर हुआ करते थे, परन्तु भोले–भाले होने के नाते गोरों की पिस्तौल एवं बंदूक की आवाज़ को दैवीय प्रकोप समझ कर वे जो कहते, वो वे करने लगे...! हबशियों के घर भी हिंदुस्तानी आदिवासियों की तरह कच्चे घास–फूंस एवं गोबर मिट्टी के बने होते थे, जो गोल आकार के एवं मात्र एक दरवाज़े वाले रहते थे। इनकी भाषा 'टाल' होती थी। गोरे जैसा व्यवहार हबशियों के साथ करते आ रहे थे, वैसा ही यहाँ बसे ग़ैर ईसाइयों के साथ करना अपना अधिकार 'समझते थे। लेकिन लंदन प्रवास के दौरान गांधी यह जान गये थे कि ब्रिटिश संसद अपने संविधान के अनुसार काफ़ी हद तक प्रजातांत्रिक तरीक़ों को अपनाते हुए मानव अधिकारों का संरक्षण करने का प्रयास करती है ! लेकिन यहाँ उन्हें उसका दूसरा चेहरा ही नज़र आया ! वे सोचने लगे कि हो सकता है यहाँ के क़ायदे–क़ानून बनाने और मनमाने का काम स्थानीय सरकारों का होता है, शायद, इसलिए यहाँ का सच वहाँ तक नहीं पहुँच पा रहा हो... या तोड़–मरोड़ कर पहुँचाया जाता हो...! गांधी ने मन बना लिया कि यहाँ की हक़ीकत ऊपर तक पहुँचा कर सच्चाई जाननी चाहिए। इस तारतम्य में वे वहाँ के हिंदुस्तानियों से व्यक्तिगत रूप से मिल कर उनकी समस्याओं को जानने एवं समझने का प्रयत्न करने लगे। इसकी शुरुआत वे सेठ तैयब हाज़ी आदि से मिलकर, कर चुके थे...! उन मुलाक़ातियों में सेठ हाजी मुहम्मद हाज़ी जूसब भी एक बड़ा नाम था। गांधी जब सेठ अब्दुल्ला द्वारा दिये गये सिफ़ारिशी पत्र के साथ उससे मिले थे, तो उसने बड़ी आत्मीयता से उनका स्वागत किया था। इस प्रकार सेठ तैयब हाज़ी एवं सेठ जूसब से मिलने के बाद उनका सहयोग लेकर गांधी ने सेठ जूसब के यहाँ हिंदुस्तानियों की एक मीटिंग का आयोजन करा दिया। प्रीटोरिया में अधिकांश व्यापारी मुसलमान होने के कारण मीटिंग में भी अधिकांश वे ही मौजूद थे। हिंदू नाम मात्र के थे। क्योंकि वहाँ मुसलमान अपने आपको अरबी

कह कर छूट पा लेते थे, जबकि हिंदुओं को छोटा–मोटा फेरी का काम करके या गिरमिटिया की तरह रहकर ही ज़िंदगी गुज़ारना पड़ती थी। वे बड़ा व्यापार नहीं कर सकते थे। 'ज़्यादा हुआ तो वेटर बन जाते थे, वह भी बिना अनुज्ञापत्र के नहीं ! जब सरकार की मर्जी होती तब उसे नाम मात्र का मुआवजा देकर निकाला जा सकता था। मीटिंग में गांधी ने ज़ोश भरा भाषण दिया; जिसे सुनकर पूरा सदन राष्ट्रभक्ति एवं स्वाभिमान की प्राणवायु से ओतप्रोत हो गया। पहली मीटिंग में ही एक समिति बना कर सामुहिक रूप से अपनी समस्याओं के लिए लड़ने की रूप रेखा बन गयी। जब गांधी ने समिति को बिना किसी मेहनताने के अपनी सेवाएँ देते रहने की घोषणा की तो बस, फिर क्या था अन्य लोगों ने साधन एवं पैसे की किसी भी प्रकार की कमी नहीं होने देने का आश्वासन दिया। मीटिंग में मौजूद अधिकांश लोग संपन्न ज़रूर थे, परन्तु अंग्रेजी नहीं जानने के कारण अपने कारोबार एवं हक़ पाने के मामले में पीछे रह जाते थे। उनको इस हीन भावना से निकालने के लिए गांधी ने उन्हें प्रस्ताव दिया कि जो भाई अंग्रेजी या अन्य कोई व्यावहारिक ज्ञान सीखना चाहे उसे वे निःशुल्क रूप से स्वयं सिखाने को तैयार हैं। उनमें से दो लोग तैयार हुए, जिन्हें गांधी ने ज़रूरी कामकाज़ी अंग्रेजी सिखा कर आत्मनिर्भर बनाया।

समिति की बैठक अधिकांश समय मस्जिद में ही हुआ करती थी। जैसे–जैसे लोग समिति से जुड़ते गये, वैसे–वैसे समस्याओं का अंबार लगने लगा। इसका फ़ायदा यह हुआ कि क़रीब–क़रीब प्रिटोरिया के सभी हिंदुस्तानियों से गांधी का व्यक्तिगत संबंध स्थापित होने लगा, क्योंकि उस समिति के पीर बावर्ची भिश्ती सभी गांधी ही थे। इस एकजुटता का फ़ायदा उठाते हुए गांधी ने स्थानीय ब्रिटिश एजेंट (ब्रिटिश सरकार के प्रतिनिधि) से मिलने का मन बनाया ताकि उसके माध्यम से हिंदुस्तानियों की समस्याएँ स्थानीय शासन के साथ ब्रिटिश सरकार तक पहुँचाई जा सकें ! परन्तु यहाँ उस एजेंट के अधिकार मात्र मिडिल मैन की तरह सीमित थे। इसके बावजूद उसने उन्हें हर संभव मदद करने का आश्वासन दिया।

समिति के माध्यम से गांधी ने सबसे पहले रेलयात्रा के दौरान होने वाले भेदभाव को लेकर रेलवे विभाग के अधिकारियों को रेलवे के नियम–क़ायदों का हवाला देकर पत्र लिखा– 'आपके विभाग के क़ायदे–क़ानूनों के अनुसार हिंदुस्तानियों को भी हर श्रेणी में यात्रा करने का अधिकार है, अतः उन्हें उसकी पात्रता सुनिश्चित करने का प्रावधान कराने का कष्ट करें...!'

क़लम में ऐसी ताक़त होती है कि निरंकुश से निरंकुश तानाशाह भी लिखा–पढ़ी करने पर जवाब देने को बाध्य हो जाता है, भले ही परोक्ष रूप से वह दुर्भावनावश... उसमें पूर्व की तरह प्रताड़ित करते रहने का रास्ता बनाये रखे ! रेलवे अधिकारियों ने उसी चालाकी से जवाब दिया– 'हिंदुस्तानी हर श्रेणी में यात्रा कर सकता है, परन्तु वह साफ़–सुथरा एवं उचित वेशभूषा में होना चाहिए। यदि वह गंदा पाया गया तो वंचित किया जा सकता है।'

इससे बहुत कुछ फायदा भले ही नहीं हुआ हो, क्योंकि साफ़–सुथरे और गंदे का आकलन करने का काम तो किसी गोरे अधिकारी को ही करना था; परन्तु इससे हिंदुस्तानियों के मनोबल में काफ़ी इजाफा हुआ... और यह समझ आया कि यदि हम अपने अधिकारों के प्रति सजग हो जायें तो बहुत से अन्यायों से बच सकते हैं। इसके साथ ही वे यह सोचने पर मजबूर हुए कि हमारी मुसीबतों का कारण हमारी दरिद्रता के साथ गंदा रहने की आदत भी है ! इस बहाने गांधी को उनके बीच स्वच्छता अभियान चलाने एवं ऊँच–नीच का ज़हर कम करने में मदद मिल गयी। यह सब जान कर लगता है कि उस समय वहाँ हिंदुस्तानियों की स्थिति गोरों के सामने ठीक वैसी ही होनी चाहिए– जैसी आज भी हमारे यहाँ ग़रीब, दरिद्र, दलित, ग्रामीण या आदिवासी की तथाकथित उच्च एवं सवर्ण वर्ग की नज़रों में होती है, जिसके कारण सरकार को 'एट्रोसिटी' जैसा कड़ा क़ानून बनाना पड़ा है ! इस सामंती अधिनायकवादी मानसिकता के शिकार केवल दलित ही नहीं होते बल्कि अच्छे–अच्छे संपन्न, प्रतिष्ठित, समाज सुधारकों के परिवार में अपने कमज़ोर भाई–बहनों के साथ भी ऐसा ही दोयम दर्जे का व्यवहार किया जाता है। यही नहीं, हर प्रशासनिक व्यवस्था में कोई मातहत– साहब या मालिक के समकक्ष बैठना तो क्या सीधे खड़ा नहीं हो सकता !

ट्रांसवाल के क़ानून के मुताबिक वहाँ ग़ैरईसाई को सालाना तीन पौंड दाखिला फीस जमा कराना होती थी, जो बहुत अधिक थी। यही नहीं, वहाँ हिंदुस्तानी अंग्रेज़ बस्ती से दूर कहीं अलग बस्ती बना कर ही रह सकते थे, जैसे आज भी आज़ाद हिंदुस्तान में दबंगों द्वारा वर्ग एवं वर्ण विशेष के साथ ऐसी ही स्थिति निर्मित करने की कोशिश की जाती है ! वहाँ हिंदुस्तानियों को वोट देने का अधिकार नहीं था। वे पटरी यानी फुटपाथ पर नहीं चल सकते थे एवं रात के 9 बजे के बाद बिना परवाना यानी विशेष पहचान पत्र के नहीं निकल सकते थे। इस पीड़ा एवं अपमान के शिकार गांधी भी हो सकते थे, खासकर जब वे मि.कोट्स के यहाँ से रात्री में चर्चा करने के बाद देरी से घर वापस आ रहे होते थे। इसमें मि. कोट्स भी उनकी मदद करने में असहाय था, जबकि उसे गोरा होने के नाते किसी को भी अपने सेवक के रूप में परवाना देने का अधिकार था, जिसे आज 'वर्क परमिट' नाम दे दिया गया है ! लेकिन गांधी को उस प्रावधान के अंतर्गत परवाना देना सरेआम धोखेबाज़ी होती। इस समस्या से निजात दिलाने के लिए वह गांधी को अपने मित्र सरकारी वकील डॉ. क्राउजे के पास ले गया... परन्तु वह भी ग़ैरक़ानूनी परवाना देने से रहा...! लेकिन जब बातों–बातों में डॉ. क्राउजे को यह पता चला कि गांधी भी उसी 'इन' के बैरिस्टर हैं, जिसका वह है... तो वह दुखी हो गया...। परन्तु करता क्या ? लेकिन व्यक्ति यदि करना चाहे तो बहुत कुछ कर सकता है– डॉ. क्राउजे ने उन्हें एक परिचय पत्र लिख कर दिया– 'ये जब जहाँ आना–जाना चाहें, जाने दिया जाये, पुलिस दख़लांदाज़ी न करे...!' गांधी का उससे काम चलता रहा।

बकरे की माँ कब तक खैर मनाती...! एक दिन जब गांधी प्रेसीडेंट स्ट्रीट के फुटपाथ से गुज़र रहे थे, तब प्रेसीडेंट क्रूगर के संतरी ने गांधी को सामान्य कुली मान कर पहले अपनी भाषा में डाटा–फटकारा, गालियाँ दीं, और जब गांधी ने वह पत्र दिखाने की कोशिश की तो घुटने में दिमाग़ रखने वाला वह संतरी उनकी बात क्या सुनता, क्या समझता... उसने उन्हें धक्का मार कर गालियाँ देते हुए लात मारकर पटरी से नीचे गिरा दिया...! इत्तफ़ाक़ था कि उसी समय मि. कोट्स उधर से गुज़र रहे थे। वे रुके, गांधी की मदद की और उस संतरी को कुछ कहते हुए, गांधी से बोले– "मि. गांधी ! आप इसकी शिक़ायत करो, मैं गवाही दूंगा।" गांधी ठहरे सत्य अहिंसा पर चलने वाले, बोले– "धन्यवाद, मि. कोट्स ! इसमें इसकी क्या ग़लती है ? यह तो वही कर रहा है, जैसा इसके मालिकों ने कहा है या सिखाया है ! यह भी मेरी तरह ही उनका गुलाम है ! मैंने संकल्प लिया हुआ है कि मैं सत्य अहिंसा के मार्ग पर चल कर कभी हिंसा का मार्ग नहीं अपनाऊंगा, चाहे कोई मेरे शरीर को कितना भी नुकसान पहुँचा दे ! हमारे उपनिषदों एवं गीतामाता में कहा है– 'शरीर नश्वर है, आत्मा अमर है।' अपने और दूसरों के हक़ की क़ानूनी लड़ाई भी मैं इसी मार्ग पर चल कर लडूंगा, भले ही सामने कोई कितना बड़ा तानाशाह शासक हो,' क्योंकि सबके ऊपर तो 'वो' है, जिसे आप गॉड कहते हैं और हम ईश्वर...! 'ईशा वास्यम् इदं सर्वम् !' किसी प्रशासक से यह सब (सृष्टि) व्याप्त है।' (ईशावास्य उपनिषद्) एक दिन जीत सत्य की ज़रूर होगी...!"

मि. कोट्स ने उस संतरी से डच भाषा में कुछ कहा, जिसके बाद संतरी ने अपनी भाषा में गांधी से माफ़ी मांगी। आज पढ़ने–सुनने में यह घटना बहुत छोटी लगती है, क्योंकि हम आज भी इस प्रकार की घटनाएँ देखने एवं भोगने के आदी हैं ! मि. कोट्स और हम में बस इतना अंतर है कि जब हम कई बार किसी बेकसूर मजबूर बदनसीब को किसी दबंग के द्वारा इसी प्रकार लतियाते एवं गाली देते हुए देखते हैं, तब मि. कोट्स की तरह पीड़ित के पक्ष में खड़े होने के बजाय ही... ही... करते हुए दबंग की तान में तान मिलाने लगते हैं ! और यदि दबंग सजातीय या आपला मानुष हुआ तो उसके साथ 'मॉब लिंचिंग' तक में शामिल हो जाते हैं ! जबकि वह संतरी मि. कोट्स की जाती का गोरा होने के साथ जो कर रहा था वह वहाँ की परम्परा के अनुसार ही कर रहा था, परन्तु उस घटना ने मि. कोट्स को हिला कर रख दिया। वह इतना विचलित हो गया कि कई दिनों तक गांधी के साथ अपने धर्म की बात करना भूल गया। वह सोच में पड़ गया कि– 'जिस गांधी की अपने धर्म के प्रति इतनी श्रद्धा एवं विश्वास है, वह हमारे किसी प्रलोभन में कैसे और क्यों आने लगा ? वह तो इसी जन्म में इसी लोक में संतरी के जूते की लात एवं गालियाँ खाकर भी ईसा की तरह शांत रहकर कह रहा है– 'गॉड इन नासमझों को माफ़ करे...!' हम उसे इससे ज्यादा शांति 'प्रभु के राज्य' में मिलने के लिए कैसे आश्वस्त कर सकते हैं ?' यही अंतर है धर्म को मात्र ओढ़ने और आत्मसात करने में ! यहाँ मि. कोट्स भी सच्चा ईसाई नज़र आ रहा है ! उसने अपने धर्मभाई का पक्ष न लेकर सच्चाई का साथ दिया। गांधी की यही विशेषता रही है कि वे अपनी बात अपने कर्म एवं चरित्र द्वारा महसूस कराते थे। इसका असर यह हुआ कि इसके बाद से कोट्स गांधी को ईसाई बनाने का खयाल लाना तो छोड़ो, अपने आपको ईसाई बचाये रखने में लग गया...! लेकिन वहाँ गांधी की एक अनार सौ बीमार जैसी स्थिति थी ! मि. कोट्स को तो बहुत कुछ समझ आ गया, परन्तु मि. बेकर को कैसे समझाया जा सकता था ? उसे पूरी उम्मीद थी कि वह एक–न–एक दिन गांधी को ईसाई बना लेगा। इसी तारतम्य में वह गांधी को एक ईसाई महाधर्मसभा में अपना व्यक्तिगत मेहमान बना कर ले गया। यह ताज्जुब की बात थी कि कोई ग़ैर ईसाई–ईसाइयों के धर्मोत्सव में उन्हीं की तरह बराबरी से भाग ले रहा था...! वहाँ तक पहुँचने के दौरान मि. बेकर एवं गांधी को कई जगह कई बार असहज स्थिति से भी गुज़रना पड़ा; लेकिन मि. बेकर हर जगह गांधी को पूरे सम्मान के साथ बराबरी से रखने में सफल रहा। क्योंकि मि. बेकर की ईसाई समुदाय में एक प्रतिष्ठित पादरी की तरह पहचान थी। अन्य लोगों ने इसे धर्म परिवर्तन कराने का प्रयास माना ! बस, फिर क्या था हर जगह जिसको जो मौक़ा मिलता वह गांधी पर अपनी तरह से डोरे डालने की कोशिश करने लगा या परोक्षरूप से दबाव बनाने का प्रयत्न...।

ग़रीब की बीवी सबकी भाभी ! उधर मुसलमान गांधी का इस्लाम के प्रति ज्ञान एवं सद्भाव देख कर उन्हें मुसलमान बनाने का सोचने लगे। वैसे भी गांधी मुसलमानों पर ही आश्रित रह कर वहाँ काम कर रहे थे। परन्तु गांधी स्वधर्म से टस–से–मस नहीं हुए। गांधी ही नहीं विदेश में स्वामी विवेकानन्द को भी ऐसी ही परिस्थितियों से गुज़रना पड़ा था। इस संदर्भ में गांधी ने लिखा है– "मैं चाहता हूँ मेरे घर में सब देशों की संस्कृति ज़्यादा–से–ज़्यादा आज़ादी से फैले। लेकिन उनमें से कोई भी मुझे बहा नहीं ले जाय, यह मैं न चाहूँगा। दूसरे लोगों के मकानों में एक भिखारी या गुलाम या अनचाहे आदमी की तरह रहने को मैं तैयार नहीं हूँ।"

गांधी अपने इस विशेष गुण की वज़ह से आगे चल कर पारसी, मराठी, गुजराती, तमिल, बंगाली आदि सभी के साथ भ्रातृत्व संबंध बना कर आज़ादी की लड़ाई लड़ते रहे...। जब कभी वे इस प्रकार के मज़हबी दबावों में रह कर दुविधा में हुआ करते थे, तब हिंदुस्तान के धर्मशास्त्रियों के साथ पत्राचार करके सच जानने की कोशिश करते थे। अपने धार्मिक सहयोगी रायचंदभाई से भी उन्होंने कई बार सलाह ली। अंत में उनके पास गीतामाता का वह संदेश तो था ही–' स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः !'

प्रिटोरिया में गांधी को क़रीब एक वर्ष हो चला...! उनका पूरा खर्च सेठ अब्दुल्ला ही उठाता रहा। लेकिन इसका मतलब यह नहीं था कि सेठ कुछ नहीं कह रहा तो वे वहाँ उसके खर्चे पर रह कर अपना समाजसेवा का काम या अपने सत्य के प्रयोग करते रहें और जिस काम का पैसा पा रहे हैं, वह भूल

जायें ! वे इन सब कामो के साथ पूरी शिद्दत से उस केस का अंदरूनी एवं क़ानूनी अध्ययन भी करते रहे। दोनों पक्षों के वकीलों से मिल कर उसके 'तथ्यों' को समझते रहे; क्योंकि बैरिस्टर होने के नाते वे जानते थे कि कोई भी मुक़दमा 'तथ्यों' के आधार पर ही जीता जा सकता है। वे जान गये थे कि तथ्यों के आधार पर सेठ अब्दुल्ला का पक्ष बहुत भारी है, और जीत भी पक्की है। परन्तु कब ? अंत में वे इस निष्कर्ष पर पहुँच चुके थे कि इसका सही हल समझौता है ! जैसे ही उन्होंने दोनों पक्षों के सामने अपना मंसूबा प्रकट किया तो प्रथम प्रतिक्रिया स्वरूप दोनों की निगाह में वे शंकास्पद एवं धोखेबाज़–से नज़र आये...! परन्तु सत्य तो कसौटी पर खरा उतरता है। अंत में जब दोनों को उनकी नियत एवं दूरदृष्टि की सच्चाई का आभास हुआ तो वे उनकी बात मान गये और समझौता हो गया...! इस प्रकार गांधी ने एक साल के अंदर बैरिस्टरी से नहीं बल्कि बनियाई से अपना काम पूरा करके, अपने ऊपर खर्च किये गये पैसे की भरपाई कर के वहाँ से वापस अपने देश आने की तैयारी शुरू कर दी। इसे आप गांधी की चतुराई भी कह सकते हैं और सत्य के प्रयोगों में एक सफलता।

इस दौरान गांधी गीतामाता के कर्मयोग पर चल कर सत्य अहिंसा के प्रयोग करने के साथ धर्मचर्चाओं में शामिल होकर ज्ञानयोग का अनुसरण करने की कोशिश करते रहे। क्योंकि श्रीमद्‌भागवत में कहा है– 'ज्ञानं परमगुह्यं मे यद्विज्ञानसमन्वितम्।'... आत्मा तथा परमात्मा का ज्ञान अत्यंत गुह्य एवं रहस्यमय है !' और बिना ज्ञान के न कोई धर्म हो सकता और न ही कर्म...!

*****

गांधी के बारे में...

जितना दुनिया के लोगों ने गांधी के बारे में लिखा और आत्मसात किया है, शायद ही अन्य किसी को वह स्थान मिला हो ! इसके बावजूद विडंबना यह है कि उसके अपने देश में उसके बारे में न जाने क्या–क्या अनर्गल प्रसारित किया जाता है ! जो आज दुनिया के लिए सोचने का विषय बन रहा है।

मार्टिन लूथर किंग– शांति के लिए नोबल पुरस्कार विजेता जब एक बार हिंदुस्तान आया, तब राष्ट्रपति भवन में उसके सम्मान में आयोजित अभिनंदन समारोह में देश–विदेश के पत्रकार, राजदूत एवं जानी–मानी हस्तियों की उपस्थिति में एक पत्रकार ने उनसे पूछा– आपको शांति स्थापित करने की प्रेरणा कहाँ से मिली ? तब मार्टिन लूथर ने सहजता से कहा– मुझे यह प्रेरणा इसी देश से मिली। गांधी जी की अहिंसक नीति और उनके कार्य करने के तरीक़े ने मुझे अत्यधिक प्रभावित किया। यही नहीं, वह बोला– "अपने देश के अति भौतिकवादी माहौल के दुष्परिणामों को देखने के बाद, जब मैं भारतीय दर्शन एवं गीता का अध्ययन करता हूँ तो पाता हूँ कि इनके द्वारा बताया गया मानवतावाद, सत्य–अहिंसा का रास्ता ही विश्व में शांति स्थापित कर सकता है।"

कोरोना...!

कोरोना आज भी अबूझ–सी विस्मयकारी जानलेवा बीमारी बनी हुई है, जिसका निश्चित इलाज़ आज तक दुनिया के वैज्ञानिक तय नहीं कर पाये हैं। इसके बावजूद भी इस क्षेत्र में बहुत कुछ किये जाने के कारण उससे होने वाली मृत्यु एवं संतापों को कम किया गया है। इस कार्य में आहुति देने वालों को नमन।

यह बीमारी इतनी अबूझ है कि बिना किसी लक्षण के भी समाज में फैल रही है। यह मालूम करना मुश्किल है कि कौन इससे पीड़ित है, और कौन नहीं ! इसलिए हर समय मास्क लगा कर स्वयं की सुरक्षा के साथ अन्य को फैलाने के पाप से बचा जा सकता है। दुनिया से मिल रही ख़बरों के अनुसार करीब 30 प्रतिशत कोरोना पीड़ित लोग 6–7 माह के बाद भी विभिन्न समस्याओं से जूझ रहे हैं, जिसे 'लॉग कोविड' नाम दिया गया है। इस बीमारी के एक बार हो जाने के बाद दुबारा होने के प्रकरण भी सामने आये हैं। कई प्रकरणों में बीमारी होने के बाद भी 'एंटीबॉडी' नहीं मिली हैं ! कई प्रकरणों में कुछ माह के बाद एंटीबॉडी गायब होना पाया गया है। अतः इस वायरस के जीवन चक्र को समझना मुश्किल हो रहा है। इसलिए जब तक इसका पूरा इलाज़ या सफल वैक्सीन नहीं आ जाती तब तक सावधानी में ही सुरक्षा है। डरिये नहीं, छुपाइये नहीं, बहादुरी से लड़िये। विदिशावासी भाग्यशाली हैं कि विभिन्न विपरीत परिस्थितियों एवं दुष्प्रचार के बावजूद 'शासकीय चिकित्सकीय तंत्र' ने अपनी जान पर खेल कर उदाहरणीय कार्य करके आम जनता को बहुत बड़ी राहत पहुँचायी है। उनका आभार। नमन।

सतत गांधी सुमिरन

'सतत गांधी सुमिरन' के हम आज पाँच सौ दिन पूरे कर रहे हैं। गांधी चबूतरे पर बिना एक दिन नागा किये नियमित रूप से 'गांधी भजन' सुनना, गुनगुनाना और आस–पास की साफ़–सफ़ाई करके वहाँ रोपित क़रीब सौ पौधों की देखभाल एवं खाद्य–पानी देने का काम सुमिरन कर्ता करते रहते हैं। इसका मुख्य श्रेय प्रो. अरविंद द्विवेदी एवं उनके भ्राता प्रो. आर. आर द्विवेदी को जाता है, जो एक समर्पित श्रद्धावान 'कारसेवक' की तरह निरंतर अपनी सेवाएँ देते आ रहे हैं। उनके प्रयास ने उस स्थल को पवित्र धर्मस्थल की तरह महत्वपूर्ण बना दिया है। वहाँ नियमित कार्यक्रम के उपरांत हम 'वंदेमातरम्' गीत एवं 'जन गण मन' राष्ट्र गान करके राष्ट्र चेतना स्पंदित करने का प्रयत्न करते हैं। इस अभियान का मुख्य उद्देश्य गांधी दर्शन का प्रचार–प्रसार, संरक्षण एवं संवर्धन करने के साथ 'सबको सन्मति दे भगवान' है। इस तारतम्य में 'गांधी पर केंद्रित 'काविश' पत्रिका इस अभियान का एक छोटा–सा नमूना है, जिसे घर–घर पहुँचा कर 'गांधीचरित' पर विमर्श पैदा करने की कोशिश की जा रही है। जिसकी मांग को देख कर लगता है, हमारा मार्ग (गांधी मार्ग) सही दिशा में अग्रसर हो रहा है। परिणाम स्वरूप हम देखते हैं कि 'साकेत शिक्षा संस्थान समूह' अपने परिवार' के क़रीब दो सौ पचास विद्यार्थी एवं शिक्षको के परिजनों को गांधी पर केंद्रित प्रश्नोत्तरी के लिए प्रेरित करके इस काम को संबल प्रदान कर रहा है। यही नहीं, साकेत शिक्षा संस्था समूह के संचालक श्री संजय पाण्डेय गांधी जयंती के दिन सुबह–सुबह अपने स्टाफ़ के साथ गांधी चबूतरे पर आकर 'गांधी सुमिरन' में शामिल हुए।उस समय आस–पास का पूरा क्षेत्र ऐसे गांधीमय हो गया, जैसे गांधी की उपस्थिति में उनकी नियमित प्रार्थनासभा चल रही हो ! हम आभारी हैं– गांधी मार्गी आदरणीय श्री सुखदेव जी लड्ढा का जो समय–समय पर नियमित रूप से स्वयं और कभी–कभी सपरिवार आकर हमारे छोटे–से प्रयास को बहुत बड़ा बना देते हैं। हम कैसे भूल सकते हैं– सर्वश्री पत्रकार अशोक श्रीवास्तव, अश्विनी सूद, प्रेमनारायण सोनी, अरविंद मजूमदार, पुरातत्वविज्ञ अरविंद शर्मा, इंजी.आर. के.शर्मा, इंजी. प्रवीण श्रीवास्तव, संतोषसिंह तोमर, डॉ. हरिसिंह रघुवंशी, सुमित शुक्ला, नवीन शर्मा, रमेश वाघवानी, अमित शर्मा, राजेश कुमार गुप्ता, श्रीमती उमा श्रीवास्तव, श्रीमती वंदना श्रीवास्तव, श्रीमती शीला शर्मा, डॉ.श्रीमती कुसुम गर्ग जो नियमित रूप से प्रतिदिन सुमिरन में शामिल होकर अभियान को गतिशील बनाये हुए हैं। उन गांधी मार्गियों को तो कतई विस्मृत नहीं किया जा सकता जिन्होंने इस अभियान के जन्म के समय इसे पाला–पोसा एवं घुटने चलने लायक बनाया। उनके साथ ही हम याद करते हैं नियमित रूप से समय–समय पर गाधी सुमिरन में शामिल होने वाले सर्व श्री राजकुमार प्रजापति, महेन्द्र नामदेव, प्रो.पवन शर्मा, सन्तोष विश्वकर्मा, सिद्धांत मीना, सानिध्य सोनी, शिव कुमार तिवारी, आयुष, सतीश बंसल, राकेश बंसल, डॉ राजेश बंसल एवं डॉ. जी.के. माहेश्वरी का जो दीपावली पर शुभकामनाएँ देने आये और उन सबको जो प्रत्यक्ष या परोक्षरूप से कभी– न–कभी किसी– न– किसी रूप से सहयोग प्रदान करते रहे हैं !

हम आभारी हैं उन खानाबदोस दरिद्र परिवारों के जो दुधमुहें बच्चों से लेकर वयोवृद्ध महिला पुरुषों के साथ उसी चबूतरे पर 'गांधी' के सामने नंगी ज़मीन पर फटी पुरानी प्लास्टिक की बोरियाँ ओढ़–बिछा कर रात गुज़ारने के बाद सुबह–सुबह हमारे साथ सुमिरन में शामिल होते हैं। जैसे वे गाधी चबूतरे पर धरना–प्रदर्शन करते हुए गांधी से कह रहे हों कि जिस अंतिम व्यक्ति की बात करने और उसकी तरह ही जी ते हुए दिखने के कारण आप महात्मा की तरह आज भी दुनिया में पूजे जाते हैं, वह अंतिम व्यक्ति आज भी उतना ही उपेक्षित, वंचित, बेसहारा, मजबूर... मौजूद है, और महीनों से मुख्य चौराहे पर देश का सच उजागर करने के बाद भी 'किसी' की भी उस पर नज़रें इनायत नहीं हुईं। यदि आप (गांधी) की आत्मा को वहाँ उचित स्थान नहीं मिला हो तो पुनर्जन्म लेकर आप एक बार और सत्य के प्रयोग कर सकते हैं...!

आप तो कहा करते थे– "एक अध–भूखे राष्ट्र का न तो धर्म हो सकता है, न कला और न संगठन।" जबकि आज– राष्ट्र दुनिया में धर्म, संस्कृति, कला और विज्ञान का परचम फहरा रहा है। आपने भूखे–नंगे आदमियों के लिए कहा था– "उनके लिए हम सबसे पहले ज़िंदगी देने वाली चीज़ों को महत्व दें और उसके बाद ज़िंदगी के सारे अलंकार और उसकी सारी परिष्कृतियाँ अपने आप आ जायेंगी।... मैं उस कला साहित्य को चाहता हूँ, जो करोड़ों आदमियों के काम का हो।" वह विकास कहाँ है ? आप कहते थे– "हर आँख से हर एक आंसू पोछ लिया जाये।" हाँ, हमारे आँख के आंसू, आँखों में ज़रूर सूख गये...!

प्रणेता– डॉ. विजय बहादुर सिंह, परामर्शदाता मंडल– सुलखान सिह हाड़ा, उपेन्द्र कालूसकर, प्रो. केवल कृष्ण पंजाबी, प्रो. संजीव शर्मा, प्रो. अरविंद द्विवेदी **सम्पादक एवं प्रकाशक– डॉ. सुरेश गर्ग** / पता – माँ हॉस्पिटल परिसर, विदिशा (म.प्र.) पिन– 464001, मोबाइल नं.– 9425131010 ईमेल–drgarg.suresh@gmail.com, माँ प्रकाशन विदिशा (मालिक, प्रकाशक, संपादक) के लिए मुद्रक– शिखा ग्राफिक्स विदिशा मो. 9425150164 द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित। यह पत्रिका पूर्णतया व्यक्तिगत रूप से साहित्यिक क्षेत्र में साहित्य प्रेमियों के बीच साहित्य एवं हिंदी के संवर्धन एवं प्रसारण के लिए निःशुल्क वितरित करने के उद्देश्य से प्रकाशित की जा रही है। इसमें प्रकाशित लेख संबंधित लेखक के विचार हैं, उसकी ज़िम्मेदारी संबंधित लेखक की होगी। संपादक की सहमति नहीं। काविश पत्रिका से संबंधित समस्त वाद–विवादों का न्यायिक क्षेत्र 'विदिशा शहर' ही होगा।)

"बुक पोस्ट"

प्रति, ————————————————————